अंधेरों में घिरी हमारी शिक्षा

● कृष्ण कुमार

संविधान लागू हो जाने के बाद पहला आयोग माध्यमिक शिक्षा में सुधार के तरीके सुझाने के लिए बनाया गया था. इस आयोग की रिपोर्ट को 'मुदालियार रिपोर्ट' के नाम से जाना जाता है. इसकी कुछ सिफ़ारिशें अमल में आयीं और कई सिफ़ारिशें आज भी प्रशिक्षण संस्थाओं में रटायी जाती हैं. आज अगर आप इस रिपोर्ट को एक दर्पण की तरह देश भर में घुमाएं तो आपको लगेगा कि माध्यमिक शिक्षा की परिस्थिति उतनी नहीं बदली जितनी इस आयोग ने चाही थी. बदलाव की दिशा और प्रकृति राज्यवार इतनी भिन्नता लिये दिखती है कि विश्वास नहीं होता. आखिर हर राज्य भारत की संघीय प्रणाली का अंग है, फिर इतनी ज़्यादा भिन्नता क्यों? केरल और गोवा जैसे राज्यों में माध्यमिक शिक्षा पहले की अपेक्षा बेहतर नज़र आती है. उधर मध्य प्रदेश और पंजाब जैसे राज्यों में प्रगति की जगह अवनति के लक्षण साफ़ दिखाई देते हैं. मुदालियार आयोग के दर्पण में भारत की माध्यमिक शिक्षा विविधता नहीं, विषमता का प्रतिबिम्ब है. प्रांतीय विषमता इतनी ज़्यादा है कि दसवीं-बारहवीं की परीक्षाओं में मिले अंकों का कोई राष्ट्रीय मूल्य या मानक तय करना असम्भव है. आम धारणा है कि केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (सी.बी.एस.ई.) की परीक्षाएं ही राष्ट्रीय मानक हैं. सचाई यह है कि केंद्रीय बोर्ड की परीक्षाएं भी मुदालियार आयोग के मानकों पर खरी नहीं उतरतीं.

प्रश्न सिर्फ परीक्षा का नहीं है. होता तो हम कह देते कि बिहार में कुछ माह पहले उजागर हुआ घोटाला सिर्फ बिहार में हो सकता था. इस घोटाले ने देश-दुनिया को दिखाया कि सर्वोच्च अंक पाने वाला भी नकली हो सकता है. यह बात संयोग से खुल गयी जैसे कई राज्यों में हर साल पर्चे लीक हो जाते हैं. मध्य प्रदेश में व्यापम घोटाला कई वर्ष होता रहा और हर तरकीब आजमायी जाने के बावजूद अबतक पूरी तरह नहीं खुल पाया है. इस विकराल घोटाले में बारहवीं के बाद मेडिकल कॉलेजों में दाखिले के लिए ली जाने वाली परीक्षा का अंधेरा इतना घना सिद्ध हुआ कि देश की सर्वोच्च अन्वेषण संस्था भी अभी पूरा सच नहीं ढूंढ़ पा रही है. ज़ाहिर है, माध्यमिक स्तर की शिक्षा और परीक्षाओं को जैसी मज़बूती देने का सपना, जिसे मुदालियार आयोग के सदस्यों ने आज़ादी के उषाकाल में देखा था, अभी तक सपना ही बना हुआ है. इस बीच माध्यमिक शिक्षा की समस्याएं उषाकाल को पीछे छोड़कर भीषण ताप और उमस भरी लम्बी दोपहर में प्रवेश कर गयी हैं. सबसे ज़्यादा उमस शिक्षकों की भर्ती और उनके प्रशिक्षण की दुनिया में है. देश के जिन राज्यों में परीक्षा सम्बंधी बड़े-बड़े घोटाले हुए हैं, उन्हीं में शिक्षकों की सबसे ज़्यादा कमी और उनके प्रशिक्षण में स्तर की सर्वाधिक गिरावट दिखाई देती है.

आज देश में पहले से कई गुना अधिक प्रशिक्षण संस्थान हैं जहां बी.एड्. की डिग्री दी जाती है. मगर इनमें 80 प्रतिशत से अधिक संस्थान निजी हैं, और एक व्यवसाय की तरह चलाये जाते हैं. इन संस्थाओं में फैली विकृतियां मुदालियार आयोग की कल्पना में आयी होंगी, ऐसा मानने का कोई आधार नहीं है. इस आयोग के एक दशक बाद बना कोठारी आयोग, जिसने शिक्षा व्यवस्था के हर चरण और पहलू पर अन्वेषण किया, प्रशिक्षण के मामले में काफी आशावान था. यह क्षेत्र पिछले बीस वर्षों में तेज़ी से जिस बीमारी की चपेट में आया, उसकी तुलना कैंसर से ही की जा सकती है. उत्तर के राज्यों में चल रहे अनेक प्रशिक्षण संस्थान प्रवेश के समय ही छात्र से पूछ लेते हैं कि वह कक्षाओं में हाजिरी देना चाहता है या नहीं. दोनों स्थितियों की फीस एकदम अलग है. ऐसी तमाम

विकृतियों पर विचार करने के लिए सुप्रीम कोर्ट ने स्वर्गीय न्यायमूर्ति जे.एस. वर्मा की अध्यक्षता में एक समिति गठित की थी. इस समिति ने प्रारम्भिक छानबीन के बाद महाराष्ट्र के दो सौ से अधिक प्रशिक्षण संस्थान बंद कर देने का आदेश दिया था. इस समिति की सिफ़ारिशों को लागू करने वाली औपचारिक संस्था यानी राष्ट्रीय अध्यापक प्रशिक्षण परिषद स्वयं कई प्रकार की समस्याओं और वित्तीय कंगाली से ग्रस्त है और फिलहाल अपने अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और नये सदस्यों की नियुक्ति का इंतज़ार कर रही है.

परीक्षा और प्रशिक्षण से हटकर यदि पाठ्यचर्चा और पाठ्यक्रम पर विचार करें तो माध्यमिक शिक्षा का चेहरा पहले से कुछ भिन्न नज़र आता है. राष्ट्रीय स्तर पर इस क्षेत्र में किये गये सुधार के प्रयास जिन राज्यों ने अपने स्कूलों में लागू किये हैं, उनमें स्थिति बेहतर दिखाई देती है. इन राज्यों में अग्रणी वही केरल, गोवा, मिज़ोरम और उत्तराखंड जैसे राज्य हैं जिन्होंने अपनी शिक्षा व्यवस्थाओं को समग्र रूप से सुधारने की यत्किंचित पहल की है. शेष में कई राज्य आज तक कोठारी आयोग की एक बड़ी अनुशंसा पर भी ठीक से अमल नहीं कर पाये हैं. यह अनुशंसा थी 10 + 2 यानी 12 वर्षीय स्कूल की निरंतरता को स्वीकार करना. इस अनुशंसा के पीछे का इतिहास मुदालियार आयोग और उससे

भी पीछे के चिंतन का मनोवैज्ञानिक आधार है. पाठ्यक्रम यदि बच्चों के विकास-क्रम की समग्रता को ध्यान में रखकर बनाया जाये तो बोझ, नीरसता और दोहराव जैसी समस्याओं से बचा जा सकता है. जिन राज्यों में आज भी प्राइमरी शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा व्यवस्था से कटी हुई है और माध्यमिक शिक्षा का अंतिम चरण जूनियर कॉलेजों के जिम्मे है, वहां पाठ्यक्रम सम्बंधी समस्याएं गम्भीर रूप धारण कर चुकी हैं. अलग-अलग संस्थाओं के नियोजन में कोई तारतम्य नहीं है, इस कारण हर स्तर पर हर बात पढ़ा देने का चलन है. इसका खामियाजा छात्र और उनके शिक्षक भोगते हैं. परीक्षा व्यवस्था में सुधार की कोशिश भी कठिनाई झेलती है. दुर्भाग्यवश देश के बड़े राज्यों की स्थिति यही है. इसमें महाराष्ट्र, आंध्र-तेलंगाना, उत्तर प्रदेश और बंगाल शामिल हैं.

पाठ्यक्रम, प्रशिक्षण और परीक्षा में व्याप्त कमज़ोरियों और जड़ताओं का कोई एक कारण नहीं है. माध्यमिक शिक्षा किशोर से युवा होते बच्चों को दी जाती है. इस आयु में समाज और परिवार की आर्थिक स्थिति का प्रत्यक्ष प्रभाव बढ़ जाता है. गरीब परिवारों के किशोरों पर काम-धंधे में लगने का दबाव बढ़ जाता है. उधर समृद्ध परिवारों के बच्चों पर परीक्षा में ऊंचे अंक लाने के लिए दबाव पड़ता है. कोई आश्चर्य नहीं कि भारत जैसे विषमताग्रस्त समाज में माध्यमिक शिक्षा की कोई एक व्यवस्था नहीं है, बल्कि कई व्यवस्थाएं हैं जिन्हें मोटे तौर पर निर्धनों और समृद्धों की दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है. हम जिसे शहरी मध्यवर्ग कहते हैं, उसकी संतान प्रांतीय परीक्षा बोर्डों से जुड़े स्कूलों में बहुत कम दिखाई देती है. ये बच्चे सीबीएसई की परीक्षा देते हैं या फिर इसके समानांतर चलने वाले एक प्राइवेट बोर्ड आईसीएसई की परीक्षा देते हैं. इन दो बोर्डों से जुड़े देश के लगभग 15 प्रतिशत स्कूल बेहतर स्थिति में चलते हैं. इनमें अध्यापकों के प्रशिक्षण की अलग व्यवस्था है. केंद्र सरकार के तहत चलाये जाने वाले लगभग एक हज़ार केंद्रीय विद्यालय इन स्कूलों में शामिल हैं. यह समूची, विशेष व्यवस्था आत्मलीन ढंग से चलती है और अपनी उपलब्धियों पर मीडिया की वाहवाही प्राप्त करती रहती है. उधर राज्य-बोर्डों के परीक्षा परिणाम लाखों बच्चों को फेल करते चलते हैं. वे जिन स्कूलों में पढ़ते हैं, उनकी ओर ध्यान देने के लिए प्रांतीय, समाजों का समृद्धतर, मुखर तबका प्रांतीय सरकारों पर दबाव नहीं बनाता. इस वर्ग की संतान उसी शहर में चलने वाले राज्य-बोर्ड से जुदा स्कूलों में पढ़ती है. स्कूलों का यह बंटवारा माध्यमिक शिक्षा की नीति और व्यवस्था पर धुंधलका-सा बनाये रखता है. कब और कैसे मिटेगा यह धुंधलका? कब छंटेगा अंधेरा? ❑